विलियम हिण्टन:

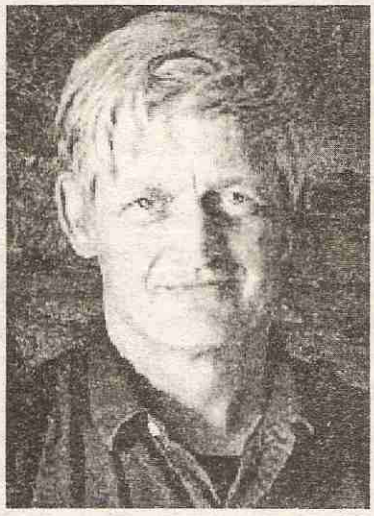

क्रान्तिकारी तूफानों में ढली एक तूफानी ज़िन्दगी

पूँजीवादी मीडिया और भाड़े के कलम घसीटों के घिनौने दुष्प्रचारों के घटाटोप के बीच चीन की नवजनवादी क्रान्ति और समाजवादी क्रान्ति की ज़मीनी सच्चाइयों से पूरी दुनिया को परिचित कराने में, विगत शताब्दी के दौरान दो अमेरिकी बुद्धिजीवियों ने अग्रणी भूमिका निभायी थी। वे थे **एडगर स्नो** और **विलियम हिण्टन** (1919-2004)। चीन के सन्दर्भ में इनकी भूमिका काफ़ी हद तक वैसी ही थी जैसी सोवियत समाजवादी क्रान्ति के सन्दर्भ में जॉन रीड, रीस विलियम्स और अन्ना लुइसस्ट्रांग की थी।

दुनिया भर की मुक्तिकामी जनता के पक्ष में लगातार उठने वाली और समाजवाद के भविष्य के प्रति लगातार अविचल आस्था का उद्घोष करने वाली यह बुलन्द आवाज़ गत 15 मई, 2004 को सदा के लिए चुप हो गयी। *'मंथली रिव्यू'* (जून, 2004) पत्रिका में प्रकाशित अपने श्रद्धांजलि-लेख में जॉन मॅगे ने विलियम हिण्टन के बारे में यह बिल्कुल सही लिखा है : ''स्पष्टवादी और भावनात्मक, फार्मर और क्रान्तिकारी, विलियम हिण्टन का जीवन मार्क्सवादी क्रान्तिकारी व्यवहार का मूर्तिमान उदाहरण है। न सांस्कृतिक और न ही पीढ़ीगत फ़र्क उनके सीखने और सिखाने में कोई बाधा बन सके। उनके जैसा जियो।''

सचमुच विलियम हिण्टन का समूचा जीवन विद्रोही और प्रयोगधर्मा युवाओं के लिए एक अनुकरणीय आदर्श और प्रेरणा-स्रोत था।

वे सदा धारा के विरुद्ध जिये। वे अध्ययन-कक्षों के पीतवर्णी प्राणी नहीं बल्कि सामाजिक संघर्षों की प्रयोगशाला के कर्मी थे। वे क्रान्ति की धमनभठठी पर काम करने के आग्रही थे, न कि काग़ज़ी गणनाओं और मानचित्रों के अध्येता। वे अचिह्नित राहों के खोजी यायावर थे, एक ऐसे विश्व-नागरिक थे, जिनका हृदय पूरी दुनिया के मुक्तिकामी, उत्पीड़ित जनों के लिए धड़कता और धधकता रहता था। प्रतिक्रिया के घटाटोप में भी उनका क्रान्तिकारी आशावाद अक्षुण्ण बना रहा। यही कारण था कि उनकी मृत्यु का शोक दुनिया के हर देश के मुक्ति योद्धाओं ने, परिवर्तनकामी युवाओं ने और प्रगतिशील बुद्धिजीवियों ने दिल की गहराई से महसूस किया।

अमेरिका में वकील पिता और शिक्षिका माँ के मध्यवर्गीय परिवार में जन्मे हिण्टन अपनी किशोरवस्था से ही बँधे-बँधाये ढर्रे पर जीने से घृणा करते थे। दुनिया के 'प्रत्यक्ष अनुभव' की उनमें अमिट भूख थी। हाई स्कूल में पढ़ते समय ही उन्होंने कनाडा में उस समय तक अविजित एक चोटी पर पर्वतारोहण किया और कॉलेज में प्रवेश से पहले एक पूरा साल देश में और देश के बाहर घुमकक्ड़ी करते हुए बिताया। इस दौरान उन्होंने कप-प्लेट धोने और ईंटें साफ करने का, अख़बार के संवाददाता का और जहाज़ पर मशीन-ब्वॉय का काम किया। अपनी आखिरी नौकरी के दौरान वे जापान और वहाँ से उत्तर-पूर्वी चीन पहुँचे। इसके बाद सोवियत संघ और यूरोप का चक्कर काटते हुए अमेरिका वापस लौटे। यायावरी के इस अनुभव के बाद हार्वर्ड विश्वविद्यालय का माहौल उन्हें ''वास्तविक दुनिया से बहुत दूर'' लगने लगा और कृषि के अध्ययन के लिए वे कॉर्नेल चले गये। हिण्टन के राजनीतिक जीवन की शुरुआत युद्ध-विरोध और शान्तिवाद से हुई। अपने इन्हीं विचारों के चलते उन्होंने द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान सेना में भरती होने से इनकार कर दिया और बतौर सज़ा काफ़ी समय श्रम शिविर में बिताया। इसी दौरान चीन में जारी क्रान्ति के प्रत्यक्ष अनुभवों पर आधारित एडगर स्नो की पुस्तक 'रेड स्टार ओवर चाइना' उनके हाथ लगी जिसने उनके जीवन की दिशा हमेशा के लिए बदल डाली। शान्तिवादी हिण्टन मार्क्सवादी बन गये। उन्होंने मार्क्सवाद का गहन अध्ययन शुरू किया। अपने पूरे जीवन में उन्होंने एक फार्मर, फार्मरों के संगठनकर्ता, कृषि विशेषज्ञ, अखबारी संवाददाता, फिल्म निर्माता, राजनीतिक विशेषज्ञ और लेखक आदि अनेक रूपों में काम किया, लेकिन मुख्यत: वे अपने को एक मार्क्सवादी क्रान्तिकारी मानते थे।

1945 में विलियम हिण्टन ने एक बार फिर चीन की यात्रा की। पुन: 1947 में संयुक्त राज्य राहत एवं पुनर्वास एजेंसी के साथ वे ट्रैक्टर टेक्नीशियन के रूप मे

चीन गये। वहाँ उन्होंने कम्युनिस्ट-शासित उत्तरी चीन पहुँचकर वहाँ अंग्रेजी शिक्षक के रूप में रुके रहने का जुगाड़ भिड़ाया और फिर एक भूमि-सुधार वर्क-टीम में पर्यवेक्षक के रूप में शामिल होकर शानसी प्रान्त के लांग बो गाँव में जा पहुँचे। 1947 से 1953 तक लम्बे चीन-प्रवास के दौरान उन्होंने अधिकांश समय लांग बो गाँव में बिताया और *''चीन के क्रान्तिकारी रूपान्तरण में, और कम से कम संख्या की दृष्टि से, अबतक के सबसे बड़े क्रान्तिकारी सामाजिक महापरिवर्तन में''* सीधे भागीदारी करते हुए हज़ारों पन्ने के नोट्स तैयार किये। अमेरिका वापस लौटकर अपने अनुभवों के आधार पर उन्होंने दो पुस्तकें लिखी : 'फानशेन' और 'आयरन ऑक्सन'। इनमें से दूसरी पुस्तक फार्म मशीनों से सम्बन्धित थी, जबकि *'फानशेन : डाक्युमेण्ट्री ऑफ रेवोल्यूशन इन ए चायनीज़ विलेज'* एक अनूठा, महाकाव्यात्मक शब्दचित्र था जिसके माध्यम से चीन के गाँवों में जारी समाजवादी रूपान्तरण की प्रक्रिया से, स्थानीय पार्टी इकाई में जारी वैचारिक संघर्षों तथा दैनन्दिन जीवन के सुख-दुख और प्रचण्ड कठिनाइयों के बीच सब कुछ बदल डालने की किसानों की अदम्य इच्छा और दुर्द्धर्ष प्रयासों से पहली बार पूरी दुनिया ठोस और जीवंत ढंग से परिचित हुई। स्वयं विलियम हिण्टन के अनुसार *'फानशेन'* लोगों को इसलिए ज्यादा विश्वसनीय लगती है क्योंकि लोगों को लगता है कि मैं काल्पनिक लोगों के बारे में नहीं बात कर रहा हूँ बल्कि वे अपनी और अपने परिचितों की उसमें छवि देखते हैं। *'फानशेन'* हिण्टन की स्वयं की उपस्थिति एक पर्यवेक्षक के रूप में नहीं बल्कि परिवर्तन की महान सामाजिक प्रक्रिया के एक पक्षधर भागीदार की है। गाँवों में भूमि सम्बन्धों के बदलाव लगातार जारी प्रक्रिया के साथ-साथ किसानों के जीवन और संस्कृति में आने वाले बदलावों की इन्दराज़ी करते हुए हिण्टन ने सामाजिक क्रान्ति के यथार्थ का आदर्शीकरण या रोमानीकरण करने की रंचमात्र भी कोशिश नहीं की। उन्होंने पार्टी कार्यकर्ताओं की ग़लतियों और भटकावों का, नयी चीज़ों के प्रति जनसमुदाय के शुरुआती सन्देह का और नयी जनवादी क्रान्ति के दौरान उत्पन्न होने वाली उन यथास्थितिवादी प्रवृत्तियों का भी विश्वसनीय चित्रण किया है जो समाजवाद के रास्ते पर आगे जाने के बजाय अपने विशेषधिकारों को क़ायम रखना चाहते थे। हिण्टन समाज और सामाजिक क्रान्ति की समस्याओं की अनदेखी के क़ायल नहीं थे। वे पार्टी या क्रान्तिकारीयों के दैवीकरण के विरोधी थे। उनका यह भी विचार था कि समाजवादी यथार्थवाद को ऐसा ही होना चाहिए।

चीन पर लिखी हिण्टन की सभी पुस्तकों में *'फानशेन'* को सर्वाधिक लोकप्रियता मिली। उसकी लाखों प्रतियाँ कुछ एक वर्षों के भीतर बिक गयी और दुनिया की दर्जनों भाषाओं में उसका अनुवाद हुआ। उस पर आधारित नाटक यूरोप के कई शहरों में मंचित हुआ और उसे अत्यधिक लोकप्रियता मिली। लेकिन *'फानशेन'* के प्रकाशन का उद्यम अपने आप में हिण्टन के लिए एक विकट संघर्ष सिद्ध हुआ। चीन से 1953 में वापसी के बाद पुस्तक के प्रकाशन में तेरह साल लग गये। उस समय अमेरिका में मैकार्थीवाद का कम्युनिस्ट-विरोधी दौर जारी था जिसकी चपेट में चार्ली चैप्लिन, आइंस्टीन, ब्रेष्ट, पॉल रोबसन जैसी सैकड़ों विश्वप्रसिद्ध हस्तियाँ आ चुकी थी। अमेरिका पहुँचते ही हिण्टन के नोट्स को कस्टम अधिकारियों ने जब्त कर लिये जिन्हें वापस पाने के लिए उन्हें पाँच वर्षों लम्बी अदालती लड़ाई लड़नी पड़ी। पासपोर्ट ज़ब्ती और आन्तरिक सुरक्षा-सम्बन्धी सीनेट उपसमिति के सामने पेशी जैसी तमाम प्रताड़नाओं के बीच हिण्टन ने पूरे अमेरिका में घूम-घूमकर तीन सौ वक्तव्य दिये और लागों को चीनी क्रान्ति की सच्चाइयों से परिचित कराया। 1958 में नोट्स वापस मिलने के बाद पाँच वर्षों का समय *'फानशेन'* की तैयारी में ख़र्च हुआ। लेकिन 1963 में पुस्तक जब तैयार हुई तो कोई भी अमेरिकी प्रकाशक उसे छापने को तैयार नहीं हुआ। अन्ततोगत्वा 1966 में पॉल स्वीजी और उनके साथियों द्वारा संचालित *'मंथली रिव्यू'* प्रेस ने यह पुस्तक प्रकाशित की और रातों रात यह पूरे देश में और फिर चन्द एक वर्षों के भीतर पूरी दुनिया में लोकप्रिय हो गयी।

'फानशेन' के अन्त में हिण्टन ने भूमि सुधार के बाद उठ खड़े हुए उन नये प्रश्नों और समस्याओं को भी रेखांकित किया, जिनका एकमात्र तर्कपरक समाधान खेती का सामूहिकीकरण ही हो सकता था। *'फानशेन'* जब प्रकाशित हुआ, तब चीन के किसान माओ त्से-तुङ के मार्गदर्शन में इस नये पथ पर अग्रसर हो चुके थे लेकिन ''नयी जनवादी क्रान्ति के सुदृढ़ीकरण के बाद ही समाजवाद की राह पर आगे बढ़ने'' का तर्क गढ़ते हुए ल्यू शाओ-ची के नेतृत्व में एक संशोधनवादी गुट पूँजीवाद का निर्माण करने की कोशिश में जुट गया था। इसका नतीजा था **महान सर्वहारा सांस्कृतिक क्रान्ति** (1966-76) के रूप में वर्ग संघर्ष का एक सर्वथा नया तूफ़ानी विस्फोट। इस नयी क्रान्ति के दौरान माओ ने समाजवाद की समस्याओं का समाधान ढूँढते हुए समाजवादी समाज में वर्ग संघर्ष के बुनियादी नियमों और आम दिशा का युगान्तरकारी प्रतिपादन प्रस्तुत किया। विलियम हिण्टन इन तूफानी वर्षों के दौरान एक बार फिर चीन में थे और एक महान क्रान्ति का साक्षी होने के साथ ही अपने पुराने परिचित लांग बो गाँव और ताचाइ में माओ त्से-तुङ के प्रयोग के नतीजों का ज़मीनी स्तर पर अध्ययन कर रहे थे। इस दौरान प्रकाशित अपनी पुस्तकों *'टर्निंग प्वाइण्ट इन चाइना : ऐन एस्से ऑन दि कल्चरल रेवोल्यूशन'* (1972) तथा *'हण्ड्रेड डे वार : दि कल्चरल रेवोल्यूशन ऐट सिनहुआ यूनिवर्सिटी'* (1972) में सांस्कृतिक क्रान्ति के सिद्धान्त और व्यवहार का ब्योरा प्रस्तुत करते हुए हिण्टन ने माओ त्से-तुङ की नीतियों का पुरज़ोर समर्थन किया।

इन वर्षों के दौरान के लांग बो गाँव और ताचाइ के अनुभवों पर आधारित हिण्टन की पुस्तक *'शेनफान'* 1983 में जब प्रकाशित हुई, उस समय तक चीन में ल्यू शाओ ची के वफ़ादार चेले देंग स्याओं-पिङ की रहनुमाई में पूँजीवादी पुनर्स्थापना का काम काफ़ी आगे बढ़ चुका था। हिण्टन माओ की मृत्यु के बाद हुए परिवर्तनों के कटु आलोचक थे, लेकिन *'शेनफान'* में सांस्कृतिक क्रान्ति की नीतियों के प्रति भी उन्होंने

अंशत: आलोचना का ही रुख अपनाया। पूँजीवादी पथगामियों के विरूद्ध पूरे चीन में जारी संघर्ष की झलक लांग बो और ताचाइ में देखते हुए भी हिण्टन की नयी मान्यता यह थी कि सांस्कृतिक क्रान्ति का संघर्ष एक सैद्धान्तिक संघर्ष नहीं बल्कि एक गुटीय संघर्ष था और माओ के साथ भी अतिवामपंथीयों और कैरियरवादियों की जमातें खड़ी थी जिसके चलते उस दौरान समाजवाद के क्षति पहुँचाने वाली गम्भीर ग़लतियाँ हुई। लेकिन 1980 के दशक में जब फिर चीन जाकर वहाँ आ रहे बदलावों के अध्ययन का हिण्टन को अवसर मिला तो उनकी मान्यताएँ एक बार फिर बदल गयी। *'मंथली रिव्यू'* में प्रकाशित अपने कई निबन्धों में उन्होंने नये सिरे से यह प्रमाणित करने की कोशिश की कि समाजवादी निर्माण एवं क्रान्ति विषयक माओ की नीतियाँ सर्वथा सही थी तथा चीन में पूँजीवादी पुनर्स्थापना 1976 के बाद ल्यू शाओ ची की नीतियों पर अमल की तार्किक परिणति थीं। माओ की मृत्यु के बाद चीन में जारी पूँजीवादी रूपान्तरण की प्रक्रिया पर उनकी पुस्तक *'दि ग्रेट रिवर्सल : दि प्राइवेटाइजेशन ऑफ चाइना, 1978-89'* 1990 में प्रकाशित हुई। 1989 में तियेन ऑन मेन चौक के नरसंहार के बाद चीन से उन्होंने पूरी तरह से अपना नाता तोड़ लिया लेकिन चीन के तथाकथित आर्थिक सुधारों की असलियत उजागर करते हुए तथा सांस्कृतिक क्रान्ति को बदनाम करने की कोशिशों को बेनक़ाब करते हुए वे लगातार लिखते रहे और विभिन्न देशों की यात्रा करते हुए व्याख्यान देते रहे। इसी दौरान वे फरवरी, 1996 में भारत भी आये थे। इस दौरान लिखे गये हिण्टन के कुछ महत्वपूर्ण लेख *'चाइना: ऐन अनफिनिश्ड बैटल'* (2002) नामक पुस्तक में संकलित हैं।

विलियम हिण्टन अमेरिका के उन गिने-चुने व्यक्तित्वों में वे एक थे जिन्होंने एशियाई 'ड्रैगन' के गर्भ में पल रहे नये समाज की बेकल उथल-पुथल को सबसे पहले पहचाना था और फिर समाजवाद के सिद्धान्तों को ज़िन्दगी की हक़ीकत में तबदील होते देखा था। वे **एडगर स्नो, एग्नस स्मेडले** और **नॉर्मन बेथ्यून** जैसे लोगों की कतार में शामिल थे जिन्होंने एक साम्राज्यवादी देश की धरती पर जन्म लिया लेकिन आजीवन तीसरी दुनिया के देशों में जारी जन मुक्ति संघर्षों के तूफ़ानों से जुड़े रहे।

हिण्टन को आखिरी साँस तक यह विश्वास था कि पूरी दुनिया का संघर्षरत मुक्तिकामी जनसमुदाय एक न एक दिन महान क्रान्तियों की ऐतिहासिक पराजय की प्रक्रिया को उलट देगा और एक बार फिर प्रतिक्रान्ति की लहर पर क्रान्ति की लहर हावी हो जायेगी। अपना यह गहन विश्वास वह लगातार दूसरों तक पहुँचाने की कोशिश करते रहे कि मानवता के भविष्य के लिए, समाजवाद एक वस्तुगत आवश्यकता है।

हिण्टन का यह विश्वास इतिहास इक्कीसवीं शताब्दी में सही सिद्ध करेगा, इसी विश्वास के साथ जन-मुक्ति-समर के इस योद्धा को हमारी हार्दिक श्रद्धांजलि!

आह्वान यहां से प्राप्त करें

उत्तर प्रदेश ■ जनचेतना, जाफरा बाजार, **गोरखपुर** ■ विजय इन्फार्मेशन सेण्टर, कचहरी बस स्टेशन, **गोरखपुर** ■ जनचेतना स्टाल, कॉफी हाउस के पास, हजरतगंज, **लखनऊ** (शाम 5 से 8.30 तक) ■ प्रोग्रेसिव बुक सेण्टर, विश्वनाथ मन्दिर गेट, बी.एच.यू. परिसर, **वाराणसी** ■ शहीद पुस्तकालय, द्वारा डा. दूधनाथ, जनगण होम्यो सेवासदन, मर्यादपुर, **मऊ** ■

उत्तरांचल ■ जनचेतना, भदईपुरा, प्राइमरी स्कूल के पास, किच्छा रोड, रुद्रपुर, ऊधमसिंहनगर

दिल्ली ■ सत्यम वर्मा, 29, यू.एन.आई. अपार्टमेण्ट, सेक्टर-11, जी.एच.-2, वसुंधरा, गाजियाबाद ■ अभिनव सिन्हा, बी-100, मुकुन्द विहार, करावल नगर, दिल्ली ■ गीता बुक सेंटर, **जे.एन.यू.** ■ बुक कार्नर, श्रीराम सेंटर, **मंडी हाउस**

हरियाणा ■ नरभिंदर सिंह, शहीद भगतसिंह विचार मंच, हरियाणा, ग्रा./पो.**संतनगर**, जिला **सिरसा** ■ पंकज, प्लाट नं. 33, सेक्टर 15, सोनीपत

बिहार ■ पीपुल्स बुक हाउस, पटना कालेज के सामने, **पटना**

बंगाल ■ बुक मार्क, 6, बंकिम चटर्जी स्ट्रीट, **कलकत्ता** ■ जनार्दन थापा, लुकसान बाजार, पो. करेन, जि. **जलपाईगुड़ी** ■ राकेश गोरखा, सरस्वती पुस्तक मन्दिर, प्रधाननगर, **सिलीगुड़ी**

मध्य प्रदेश ■ चिंचोलकर बुक हाउस, बस स्टैण्ड, जगदलपुर, बस्तर

महाराष्ट्र ■ पीपुल्स बुक हाउस, 15, कावसजी पटेल स्ट्रीट, फोर्ट, **मुम्बई**

राजस्थान ■ संजय, 69, विनोबा विहार, त्रिमूर्ति अपार्टमेंट के पीछे, मालवीय नगर, **जयपुर**

भगतसिंह ने कहा

"भारतीय रिपब्लिक के नौजवानो, नहीं सिपाहियो, कतारबद्ध हो जाओ। आराम के साथ न खड़े रहो और न ही निरर्थक कदमताल किये जाओ। लम्बी दरिद्रता को, जो तुम्हें नाकारा कर रही है, सदा के लिए उतार फेंको। तुम्हारा बहुत ही नेक मिशन है। देश के हर कोने और हर दिशा में बिखर जाओ और भावी क्रान्ति के लिए, जिसका आना निश्चित है, लोगों को तैयार करो। फर्ज के बिगुल की आवाज सुनो। वैसे ही खाली जिन्दगी न गँवाओ। बढ़ो, तुम्हारी जिन्दगी का हर पल इस तरह के तरीके और तरतीब ढूँढ़ने में लगना चाहिए, कि कैसे अपनी पुरातन धरती की आँखों में ज्वाला जागे और एक लम्बी अँगड़ाई लेकर वह जाग उठे।"